प्रकाशित: 31 अक्टूबर 2017 को दैनिक जागरण में प्रकाशित -

ऐतिहासिक सच की अनदेखी

बलबीर पुंज

हाल में भारत ने छद्म-सेक्युलरवाद का मुखर रूप तब दिखा जब बीते दिनों अलीगढ़ मुस्लिम विश्वविद्यालय यानी एएमयू के संस्थापक सैयद अहमद खान की 200वीं जयंती मनाई जा रही थी। इस दौरान उनका तरह-तरह से यशगान किया गया। उनकी जयंती से संबंधित एक कार्यक्रम में पूर्व राष्ट्रपति प्रणब मुखर्जी ने उन्हें दूरदर्शी नेता बताते हुए एएमयू को भारतीय राष्ट्रवाद और चरित्र का आदर्श उदाहरण बताया। इसी तरह राष्ट्रीय मानवाधिकार आयोग के पूर्व अध्यक्ष केजी बालाकृष्णन ने उन्हें आधुनिक भारत के निर्माताओं में से एक बताते हुए उनके मिशन को आगे ले जाने पर बल दिया। यदि सैयद अहमद खान को भारत में एक नायक के रूप में प्रस्तुत किया जा रहा है तो फिर मोहम्मद इकबाल और मोहम्मद अली जिन्ना की जयंती मनाने में कैसी झिझक? पाकिस्तान में ये तीनों व्यक्ति 'पाकिस्तान के जनक' के रूप में स्थापित हैं। वहां के स्कूली पाठ्यक्रमों में तीनों हिंदू-मुस्लिम अलगाववाद पर बल देने और पाकिस्तान निर्माण के लिए आवश्यक विभाजनकारी मानसिकता को प्रोत्साहन देने वाले नेताओं के रूप में वर्णित हैं। जिन्ना और इकबाल प्रारंभ में जहां स्वतंत्रता के आंदोलन से जुड़े और बाद में औपनिवेशिक प्रपंच का महत्वपूर्ण हिस्सा बने वहीं सैयद अहमद खान ने 19वीं शताब्दी के मध्य के बाद भारत में 'दो राष्ट्र' के सिद्धांत का समर्थन किया। पाकिस्तान ने अपनी अलग पहचान को रेखांकित करने के लिए गांधीजी, नेताजी बोस या फिर भगत सिंह के सम्मान में अपने किसी भी सार्वजनिक भवन, संस्था या फिर सड़क का नाम नहीं रखा है। वहां सैयद अहमद खान के नाम पर कई संस्थान और भवन हैं जिनमें कराची का सर सैयद अहमद इंजीनियरिंग प्रौद्योगिकी विश्वविद्यालय, सर सैयद सरकारी कॉलेज और रावलपिंडी स्थित प्रख्यात एफजी सर सैयद अहमद कॉलेज आदि शामिल हैं। सर सैयद अहमद की 200वीं जयंती पर पाकिस्तान ने उनकी स्मृति में डाक टिकट भी जारी किया और आज भारत में उनकी विरासत को राष्ट्रवाद का प्रतीक बताया जा रहा है। सैयद अहमद खान के भ्रामक और मिथकीय महिमामंडन की पृष्ठभूमि में सत्य की खोज आवश्यक है17 अक्टूबर, 1817 को जन्मे सैयद अहमद खान 1838 में ईस्ट इंडिया कंपनी से जुड़े। अंग्रेजों का विश्वास जीतकर वह 1867 में एक न्यायालय के न्यायाधीश भी बने और 1876 में सेवानिवृत्त हुए। अप्रैल 1869 में सैयद अहमद खान अपने बेटे के साथ इंग्लैंड गए, जहां छह अगस्त को उन्हें 'ऑर्डर ऑफ द स्टार ऑफ इंडिया' से सम्मानित किया गया। 1887 में उन्हें लॉर्ड डफरिन द्वारा सिविल सेवा आयोग के सदस्य के रूप में भी नामित किया गया। इसके अगले वर्ष उन्होंने अंग्रेजों के साथ राजनीतिक सहयोग को बढ़ावा देने और अंग्रेजी शासन में मुस्लिम

भागीदारी सुनिश्चित करने के लिए अलीगढ़ में 'संयुक्त देशभक्त संघ' की स्थापना की। खान बहादुर के नाम से प्रख्यात सैयद अहमद की वफादारी से खुश होकर ब्रिटिश हुकूमत ने उन्हें वर्ष 1898 में नाइट की उपाधि भी दी। वर्ष 1885 में जब भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस की स्थापना के साथ देश में पूर्ण स्वतंत्रता और लोकतांत्रिक व्यवस्था की मांग उठनी शुरू हुई तब उन्होंने हिंदू बनाम मुस्लिम, हिंदी बनाम उर्दू, संस्कृत बनाम फारसी का मुद्दा उठाकर मुसलमानों की मजहबी भावनाओं का दोहन किया। उन्होंने यह विचार स्थापित किया कि मुसलमान का दैवीय कर्तव्य है कि वे कांग्रेस से दूर रहें। अपने इस अभियान में वह काफी हद तक सफल भी हुए। ऐसा अनुमान है कि उस कालखंड में देश के बहुत कम मुस्लिम ही गांधीजी के अखंड भारत के सिद्धांत के साथ खड़े रहे। शेष मुस्लिम समाज की सहानुभूति पाकिस्तान के साथ थी। यह ठीक है कि उनमें से अधिकांश भारत में ही रह गए। 16 मार्च, 1888 को मेरठ में दिए सैयद अहमद खान के भाषण ने भारत में मजहब आधारित विभाजन के वैचारिक दर्शन का शिलान्यास कर दिया। उनके अनुसार, 'सोचिए यदि अंग्रेज भारत में नहीं हों तो कौन शासक होगा? क्या दो राष्ट्र-हिंदू और मुसलमान एक ही सिंहासन पर बराबर के अधिकार से बैठ सकेंगे? निश्चित रूप से नहीं। आवश्यक है कि उनमें से एक-दूसरे को पराजित करें। जब तक एक कौम दूसरे को जीत न ले तब तक देश में कभी शांति स्थापित नहीं हो सकती। मुस्लिम आबादी हिंदुओं से कम हैं और अंग्रेजी शिक्षा प्राप्त मुस्लिम तो और भी कम, किंतु उन्हें कमजोर नहीं समझा जाए। वे अपने दम पर मुकाम पाने में सक्षम हैं।'

सैयद अहमद के अनुसार, 'सात सौ वर्षों तक हमने जिन पर शासन किया, उनके अधीन रहना हमें अस्वीकार्य है। अल्लाह ने कहा है कि मुसलमानों का सच्चा मित्र केवल ईसाई ही हो सकता है, अन्य समुदाय के लोगों से दोस्ती संभव नहीं है। हमें ऐसी व्यवस्था को अपनाना चाहिए जिससे वे हमेशा के लिए भारत में राज कर सकें और सत्ता कभी भी 'बंगालियों' के हाथों में न जाए।' वह कांग्रेसियों को अक्सर 'बंगाली' कहकर संबोधित करते थे, क्योंकि उस समय कांग्रेस नेतृत्व के बड़े हिस्से पर बंगाली काबिज थे। अपने एजेंडे के तहत सैयद अहमद खान ने 1875 में एक शैक्षणिक संस्था की शुरुआत की जो बाद में मुस्लिम एंग्लो ओरिएंटल कॉलेज और अंतत: वर्ष 1920 में अलीगढ़ मुस्लिम विश्वविद्यालय यानी एएमयू के रूप में स्थापित हुआ। यह एक तथ्य है कि मोहम्मद अली जिन्ना ने वर्ष 1941 में इस विश्वविद्यालय को 'पाकिस्तान की आयुधशाला' की संज्ञा दी थी। इसी तरह 31 अगस्त, 1941 को एएमयू छात्रों को संबोधित करते हुए मुस्लिम लीग के नेता लियाकत अली खान ने कहा था, 'हम मुस्लिम राष्ट्र की स्वतंत्रता की लड़ाई जीतने के लिए आपको उपयोगी गोला-बारूद के रूप में देख रहे हैं।' बाद में लियाकत अली खान पाकिस्तान के पहले प्रधानमंत्री बने थे। वर्ष 1954 में आगा खान ने अलीगढ़ के छात्रों के लिए कहा था, 'सभ्यता के इतिहास में विश्वविद्यालय देश के बौद्धिक और आध्यात्मिक जागरण में मुख्य भूमिका निभाते हैं। हम यह गौरव के साथ दावा कर सकते हैं कि संप्रभु पाकिस्तान का जन्म अलीगढ़ के मुस्लिम विश्वविद्यालय में हुआ।' सैयद अहमद खान मुसलमानों में आधुनिक शिक्षा का प्रसार इसलिए चाहते थे ताकि मुस्लिम समाज औपनिवेशिक साम्राज्य की बेहतर तरीके से खिदमत कर सके और अंग्रेजों के साथ मिलकर हिंदुओं के खिलाफ एक संयुक्त मोर्चा बनाए।

आखिर इस सब सच की अनदेखी करने का क्या मतलब?

[लेखक राज्यसभा के पूर्व सदस्य और स्तंभकार हैं]